औरतें अब बोलने लगी हैं

परंपराओं की गिरहें खोलने लगी हैं
जी हाँ,औरतें अब बोलने लगी हैं

कहती नहीं है सारा बाहर,
कुछ भीतर भी रख लेती हैं
थोड़ी ही सही, परतें खोलने लगी हैं
औरतें अब .....
आसमां की ऊंचाइयाँ नापने लगी हैं,
हौंसलों से अपने
पंखों को आजकल तोलने लगी हैं
औरतें अब.....
जानती हैं बेपर्दगी से मिलेंगी गालियाँ,
न बजेंगी तालियाँ
फिर भी बेफिक्र, बेपरवाह डोलने लगी हैं
औरतें अब.....
उठे कोई हाथ या पड़े कहीं लात,
गुडमुड हो बैठती नहीं,करती प्रतिघात
हाथ-पैरों का वजन तोलने लगी हैं
औरतें अब.....
करती हैं सर्वस्व समर्पित,
खुद के लिए भी थोड़ा अर्पित
रंग अपनी पसंद के घोलने लगी हैं
औरतें अब.....
नहीं रहना चाहती सीता,अहिल्या सी गौण,
न यशोधरा, रत्ना सी मौन,
परिवर्तन के सुरों में डोलने लगी हैं
औरतें अब.....
त्रास दोयम का अब न सहेंगी,
अश्रुधार में अब न बहेंगी
अपनी इयत्ता को टटोलने लगी हैं
औरतें अब.....
आंकने लगी हैं खुद की जगह,
समाज में अपने होने की वजह
वर्जनाएँ तमाम तोड़ने लगी हैं
औरतें अब .....
रास्ता चाहे कठिन हो कितना
बढ़ते जाना नहीं है रुकना
कदम लक्ष्य की ओर मोड़ने लगी हैं
औरतें अब बोलने लगी हैं
अर्गलाएँ सभी खोलने लगी हैं
औरतें अब बोलने लगी हैं

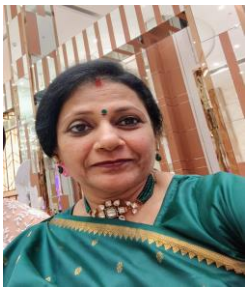

डॉ. मंजु रुस्तगी

साँकल

देखा है कभी
उस छोटी सी साँकल को
सुरक्षित रखती है जो
बाहरी तूफानों से और
बचाए रखती है,
छिन्न-भिन्न होने से
मकान के
अस्तित्व को।
वैसी ही होती है
छोटी सी जिह्वा
इस देह की साँकल
बचाए रखती है जो
टूटने से, बिखरने से
हमारे
व्यक्तित्व को।

वलियाम्मल कॉलेज फॉर वीमेन

अन्नानगर ईस्ट , चेन्नई

ISSN:2583-8849